[2010] 4 एस.सी.आर. 313

रविचंद्रन

बनाम

राज्य द्वारा उप पुलिस अधीक्षक, मद्रास

(2003 की आपराधिक अपील सं. 909-910)

मार्च 25, 2010

[डॉ. मुकुंदकम शर्मा और एच.एल. दत्तु, न्यायमूर्तिगण]

भारतीय दंड संहिता, 1860:

धाराएं 120-बी, 420/120-बी, 477ए/120-बी और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 5(1)(डी)/5(2) - पामोलिन तेल के लिए अनुज्ञापत्र में प्रक्षेप और जालसाजी - विचारण न्यायालय द्वारा दोषसिद्धि, उच्च न्यायालय द्वारा पुष्ट - अभिनिर्धारित: अभिलेख पर ऐसा कोई साक्ष्य नहीं है जो यह सिद्ध और स्थापित करने के लिए किसी संबंध को इंगित करे कि प्रक्षेप और जालसाजी किसी भी आरोपी व्यक्ति अर्थात् ए1, ए2 या ए4 द्वारा की गई थी - केवल इसलिए कि ए4, ए3 का भाई है, यह किसी भी प्रकार से यह सिद्ध और स्थापित नहीं करता है कि उसे यह ज्ञान था कि जब उसने इसे फेडरेशन के कार्यालय के समक्ष प्रस्तुत किया था तो अनुज्ञापत्र में प्रक्षेप किया गया था - न्यायालय के सुविचारित मत में, प्रक्षेप और साथ ही उस पर संलग्न आद्यक्षरों को ए2 और ए1 के हाथों में होना सिद्ध और स्थापित नहीं किया गया है - अभियोजन यह सिद्ध और स्थापित करने में बुरी तरह विफल रहा है कि कथित प्रक्षेप और जालसाजी ए1, ए2 या ए4 में से किसी के द्वारा की गई थी - चूंकि अपील लंबित रहने के दौरान ए-3 की मृत्यु हो गई, इसलिए 2003 की आपराधिक अपील सं. 805-806 उपशमित हो जाती हैं - अन्य सभी अपीलें स्वीकार की जाती हैं, प्रत्येक आरोपी व्यक्ति के विरुद्ध पारित दोषसिद्धि और दंडादेश के आदेश अपास्त किए जाते हैं - अपील का उपशमन -

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 - धारा 394(2), परंतुक - भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1947 - धाराएं 5(1)(डी)/5(2) - पांडिचेरी आवश्यक वस्तु (स्टॉक का प्रदर्शन, मूल्य और खातों का रखरखाव) आदेश, 1975 - खंड 4(9) - आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955 - धारा 7(1)(ए)(ii)। [कंडिका 13, 15-17]

रहीम खान बनाम खुर्शीद अहमद और अन्य (1974) 2 एससीसी 660; और मुरारी लाल बनाम मध्य प्रदेश राज्य एआईआर 1980 एससी 531, का संदर्भ दिया गया।

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973:

धारा 394(2), परंतुक - आरोपी-अपीलकर्ता की मृत्यु पर अपील जारी रखने की अनुमति के लिए विधिक प्रतिनिधियों द्वारा आवेदन - स्वीकृत।

वाद विधि संदर्भः

(1974) 2 एससीसी 660	**कंडिका 14**	**में संदर्भित**
एआईआर 1980 एससी 531	**कंडिका 14**	**में संदर्भित**

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार: 2003 की आपराधिक अपील सं. 909-910।

1994 की आपराधिक अपील सं. 220 और 1994 की 222 में मद्रास उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार में पारित दिनांक 31.12.2002 के निर्णय और आदेश से।

के साथ में

2003 की आपराधिक अपील सं. 1515-1516, 1527-1528, 805-806, 807-808 और 911-912।

अपीलकर्ता के लिए आर. वेंकटरमनी, सी.के.आर. लेनिन सेकर, अल्जो, आर. नेदुमारन, शिवाजी एम. जाधव, अरविंद कुमार, सैंथिल जगदीसन, वी. रामसुब्रमण्यम।

उत्तरदाता के लिए पी.पी. मल्होत्रा, एएसजी, एम. चटर्जी, पी.के. डे, ए. देब कुमार, अरविंद कुमार शर्मा।

न्यायालय का निम्नलिखित आदेश सुनाया गया

आदेश

1. इन सभी अपीलों में समान और जुड़े हुए तथ्य शामिल हैं। चूंकि, हमारे विचारार्थ उत्पन्न होने वाले विधिक मुद्दे भी समान हैं, इसलिए हम इस सामान्य निर्णय और आदेश द्वारा इन सभी अपीलों का निपटान करने के लिए आगे बढ़ते हैं।

2. इससे पहले कि हम इस मामले के तथ्यों में जाएं, हमारे लिए इस न्यायालय में दायर किए गए विविध आवेदनों और 2003 की आपराधिक अपील सं. 805-806 में अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता के कथन से निपटना उचित होगा।

3. 2003 की आपराधिक अपील सं. 1515-1516 में 2010 की आपराधिक विविध याचिका सं. 6391 से 6394 और 2003 की आपराधिक अपील सं. 1527-1528 में 2010 की आपराधिक विविध याचिका सं. 6396-6399, मृतक अपीलकर्ता-आरोपी सं. 1 के स्थान पर अपने नामों को प्रतिस्थापित करने की मांग करते हुए आरोपी सं. 1 अर्थात् कुमारगुरु के विधिक प्रतिनिधियों द्वारा दायर किए गए आवेदन हैं। इस न्यायालय में अपीलों के लंबित रहने के दौरान, अपीलकर्ता-आरोपी सं. 1 की मृत्यु 9 अप्रैल, 2007 को हो गई थी। इसलिए वर्तमान आवेदन उनके विधिक प्रतिनिधियों द्वारा मृतक अपीलकर्ता आरोपी सं. 1 के स्थान पर अपने नामों को प्रतिस्थापित करने की मांग करते हुए दायर किए गए हैं। उपरोक्त प्रार्थना के समर्थन में, मृतक अपीलकर्ता-आरोपी सं. 1 के विधिक प्रतिनिधियों ने दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 394 के प्रावधानों पर अवलम्बन किया है। उक्त आवेदनों में बताए गए कारणों से, आवेदन स्वीकार किए जाते हैं। इस प्रकार, उन आवेदकों के नाम जो मृतक-अपीलकर्ता आरोपी सं. 1 के विधिक प्रतिनिधि हैं, अभिलेख पर लाने की अनुमति दी जाती है। उक्त आवेदन उपरोक्त आदेश के अनुसार निपटाए जाते हैं।

4. यह इंगित किया गया है कि इस न्यायालय में अपीलों के लंबित रहने के दौरान, आरोपी सं. 3 अर्थात् तमिलसेल्वन जो दुकान सं. 18 का स्वामी था, की मृत्यु हो गई थी।

इस मामले को देखते हुए, जहां तक आरोपी सं. 3 के विरुद्ध अपीलों का संबंध है, अर्थात् 2003 की आपराधिक अपील सं. 805-806, वे उपशमित हो जाती हैं। तदनुसार, उन्हें अस्वीकृत किया जाता है। दुकान सं. 30 के स्वामी कंदासामी, जो प्रथम अपील में आरोपी सं. 3 है, ने अपने विरुद्ध पारित दोषसिद्धि और दंडादेश के आदेश के विरुद्ध इस न्यायालय में कोई अपील दायर नहीं की है। यह कहा गया है कि उसने उसे दी गई सजा पूरी कर ली है।

5. संक्षिप्त तथ्य, जो वर्तमान अपीलों का निपटान करने के लिए आवश्यक हैं, यह हैं कि यहां के अपीलकर्ताओं पर 1985 के एसएलपी. सी.सी. सं. 1 में धारा 120-बी, भारतीय दंड संहिता की धारा 120बी के साथ पठित धारा 420, धारा 120बी के साथ पठित धारा 477ए और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1947 की धारा 5(1)(डी) और 5(2) के प्रावधानों के अंतर्गत आरोप लगाए गए थे। 1985 के सी.सी. सं. 3 में, आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955 की धारा 7(1)(ए)(ii) के साथ पठित पांडिचेरी आवश्यक वस्तु (स्टॉक का प्रदर्शन, मूल्य और खातों का रखरखाव) आदेश, 1975 के खंड 4(ए) के अंतर्गत यहां अपीलकर्ताओं के विरुद्ध आरोप तय किए गए थे। अभियोजन का मामला यह है कि यहां के अपीलकर्ता, अर्थात् आरोपी सं. 1 और 2 ने पामोलिन तेल जारी करने के लिए अनुज्ञापत्र तैयार किया और उसका प्रतिपर्ण कार्यालय में रख लिया गया। उपरोक्त दोनों अनुज्ञापत्र और प्रतिपर्ण आरोपी सं. 2 की लिखावट में थे जिन पर ए1 और ए2 के आद्यक्षर और हस्ताक्षर भी थे। तथापि, बाद में अनुज्ञापत्र में यह पता चला कि दुकान सं. 30 के संबंध में प्रक्षेप और जालसाजी की गई थी। ऐसे अनुज्ञापत्रों में से एक इंगित करता है कि पामोलिन तेल दुकान सं. 38 के पक्ष में जारी किया जाना था। कार्यालय में रखे गए प्रतिपर्ण से यह इंगित होता है कि इसे दुकान सं. 38 के पक्ष में जारी किया जाना था और वास्तव में उसी के पक्ष में जारी किया गया था लेकिन अनुज्ञापत्र में, बाद में यह पता चला कि इसे दुकान सं. 30 के रूप में परिवर्तित और प्रक्षिप्त कर दिया गया था। दुकान सं. 30 की ओर से पामोलिन तेल की सुपुर्दगी भी ले ली गई थी।

6. उक्त दस्तावेजों में उपरोक्त प्रक्षेप और जालसाजी को ध्यान में रखते हुए, उपरोक्त प्रावधानों के अंतर्गत दो अलग-अलग मामले दर्ज किए गए थे। आरोप-पत्र प्रस्तुत करने के बाद, विचारण आयोजित किया गया और कई गवाहों अर्थात् अ.सा. 1 से अ.सा. 19 का परीक्षण किया गया तथा कई दस्तावेज भी अभिलेख पर रखे गए जिन्हें प्रदर्श पी1 से पी57 के रूप में चिह्नित किया गया।

7. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अंतर्गत सभी आरोपियों का परीक्षण किया गया और विचारण के समापन पर, 1985 के विशेष सी.सी. सं. 1 में विचारण न्यायालय ने सभी आरोपी व्यक्तियों अर्थात् ए1-ए3 को भारतीय दंड संहिता की धारा 120बी के अंतर्गत एक अपराध के लिए दोषी ठहराया और प्रत्येक को तीन साल के कठोर कारावास की सजा सुनाई और साथ ही उन्हें भारतीय दंड संहिता की धारा 120बी के साथ पठित धारा 420 के अंतर्गत दोषी ठहराया और उनमें से प्रत्येक को तीन साल के कठोर कारावास की सजा सुनाई और प्रत्येक को 500/- रुपये का अर्थदंड भी देने का आदेश दिया, जिसके न देने पर एक महीने का साधारण कारावास भुगतना होगा। आरोपी व्यक्तियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 120बी के साथ पठित धारा 477ए के अंतर्गत भी दोषी ठहराया गया और प्रत्येक को तीन साल के कठोर कारावास की सजा सुनाई गई। रविचंद्रन, ए2 और ए1 को भारतीय दंड संहिता की धारा 120बी के साथ पठित भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1947 की धारा 5(2) के साथ पठित धारा 5(1)(डी) के अंतर्गत भी दोषी ठहराया गया था और प्रत्येक को तीन साल के कठोर कारावास और 500/- रुपये का अर्थदंड देने की सजा सुनाई गई थी, जिसके न देने पर एक महीने का साधारण कारावास भुगतना होगा। कंदासामी ए3 को भारतीय दंड संहिता की धारा 109 के साथ पठित भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1947 की धारा 5(2) के साथ पठित धारा 5(1)(डी) के अंतर्गत दोषी ठहराया गया था और तीन साल के कठोर कारावास और 500/- रुपये का अर्थदंड देने की सजा सुनाई गई थी, जिसके न देने पर एक

महीने का साधारण कारावास भुगतना होगा। सभी सजाओं को एक साथ चलाने का निर्देश दिया गया था।

8. 1985 के विशेष सी.सी. सं. 3 के संबंध में, आरोपी सं. 1 और 2 को भारतीय दंड संहिता की धारा 109 के साथ पठित आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955 की धारा 7(1)(ए)(ii) के साथ पठित पांडिचेरी आवश्यक वस्तु (स्टॉक का प्रदर्शन, मूल्य और खातों का रखरखाव) आदेश 1975 के खंड 4(ए) के अंतर्गत दोषी ठहराया गया था और प्रत्येक को 6 महीने के कठोर कारावास की सजा सुनाई गई थी। आरोपी सं. 3 को आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955 की धारा 7(1)(ए)(ii) के साथ पठित पांडिचेरी आवश्यक वस्तु (स्टॉक का प्रदर्शन, मूल्य और खातों का रखरखाव) आदेश 1975 के खंड 4(ए) के अंतर्गत दोषी ठहराया गया था और उसे 6 महीने के कठोर कारावास की सजा सुनाई गई थी।

9. विचारण न्यायालय द्वारा पारित उपरोक्त निर्णय और आदेश से व्यथित होकर, अपीलकर्ताओं ने चार अलग-अलग अपीलें दायर कीं। 1994 की सी.ए. सं. 181 और 184 नामक दो अपीलें आरोपी सं. 1 द्वारा दायर की गई थीं। 1994 की सी.ए. सं. 220 और 222 नामक अन्य दो अपीलें आरोपी सं. 2 और 3 द्वारा संयुक्त रूप से दायर की गई थीं। उच्च न्यायालय ने अपने दिनांक 31.12.2003 के निर्णय और आदेश द्वारा सभी अपीलों को अस्वीकृत कर दिया।

10. दोषसिद्धि और दंडादेश के उपरोक्त निर्णय और आदेश से व्यथित होकर, हमारे समक्ष अपीलकर्ताओं ने अपीलें दायर कीं जिन्हें स्वीकार कर लिया गया। सभी अपीलों को सुनवाई के लिए सूचीबद्ध किया गया है और हमने पक्षकारों की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ताओं को सुना है।

11. अपीलकर्ताओं के अधिवक्ता ने हमारे समक्ष प्रस्तुत किया है कि निर्णयों को अपास्त करने की आवश्यकता है क्योंकि किसी भी आरोपी व्यक्ति को उनके विरुद्ध लगाए गए अपराधों का दोषी नहीं कहा जा सकता है। यह बताया गया है कि यद्यपि उपर्युक्त परमिट और

प्रतिपत्र दोनों ही आरोपी संख्या 2 द्वारा तैयार किए गए थे और उन पर आरोपी संख्या 2 और आरोपी संख्या 1 दोनों के हस्ताक्षर थे, फिर भी इस बात का कोई निर्णायक प्रमाण नहीं है कि जालसाजी और हेराफेरी दोनों आरोपियों द्वारा की गई थी। अपीलकर्ताओं की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता द्वारा तर्कों के दौरान यह भी इंगित किया गया कि जहां तक आरोपी सं. 3 का संबंध है, उसकी वर्तमान अपीलों के लंबित रहने के दौरान मृत्यु हो गई थी और उसने स्वयं न्यायालय के समक्ष कोई अपील दायर नहीं की थी। जहां तक आरोपी सं. 4 का संबंध है, उसकी ओर से उपस्थित अधिवक्ता ने हमारा ध्यान इस तथ्य की ओर आकर्षित किया है कि यद्यपि वह ए3 का भाई है, यह दर्शाने के लिए कोई साक्ष्य नहीं है कि वह वास्तव में जानता था कि फेडरेशन के कार्यालय में उसके द्वारा सौंपा गया उपरोक्त अनुज्ञापत्र किसी भी प्रकार से प्रक्षिप्त या जाली था।

12. उत्तरदाता-सीबीआई की ओर से उपस्थित भारत के अपर महा न्यायभिकर्ता श्री पी.पी. मल्होत्रा ने यह तर्क देने का प्रयास किया कि यह नीचे के दो न्यायालयों के तथ्यों का समवर्ती निष्कर्ष है और इसलिए, इन निष्कर्षों में इस न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप नहीं किया जाना चाहिए और नहीं किया जा सकता है। उन्होंने यह भी प्रस्तुत किया कि अभिलेख पर मौजूद निष्कर्ष पूरी तरह से दो आरोपी व्यक्तियों के अपराध को सिद्ध और स्थापित करते हैं और अभिलेख पर यह दर्शाने के लिए पर्याप्त सामग्री है कि प्रश्नगत दस्तावेजों की कम से कम आरोपी व्यक्तियों के ज्ञान और सहमति से जालसाजी की गई थी और इसलिए, उनके विरुद्ध पारित दोषसिद्धि और दंडादेश विधिक और वैध हैं।

13. उपरोक्त प्रस्तुतियों के प्रकाश में, हमने वाद के संपूर्ण अभिलेख पर विचार किया है। हमने वर्तमान वाद में प्रस्तुत साक्ष्य की सावधानीपूर्वक संवीक्षा की है। इसका अवलोकन करने के पश्चात, हमारा सुविचारित मत है कि अभिलेख पर ऐसा कोई साक्ष्य नहीं है जो यह सिद्ध और स्थापित करने के लिए किसी संबंध को इंगित करे कि प्रक्षेप और जालसाजी किसी भी आरोपी व्यक्ति अर्थात् ए1, ए2 या ए4 द्वारा की गई थी। केवल इसलिए कि ए4, ए3 का

भाई है, यह किसी भी प्रकार से यह सिद्ध और स्थापित नहीं करता है कि उसे यह ज्ञान था कि जब उसने इसे फेडरेशन के कार्यालय के समक्ष प्रस्तुत किया था तो अनुज्ञापत्र में प्रक्षेप किया गया था।

14. यह सिद्ध करने के लिए कि प्रक्षेप और जालसाजी ए1 और ए2 द्वारा की गई थी, अभियोजन ने अ.सा. 3 और अ.सा. 6 का साक्ष्य प्रस्तुत किया है जिन्होंने कहा है कि वे ए1 और ए2 की लिखावट, हस्ताक्षरों, आद्यक्षरों और अंकों को लिखने के तरीके को जानते थे। आरोपी व्यक्तियों की लिखावट, हस्ताक्षरों, आद्यक्षरों के बिंदु पर अ.सा. 3 और अ.सा. 6 की गवाही पर विचार करने से पहले, हम इस न्यायालय के दो निर्णयों का संदर्भ देना चाहते हैं। *रहीम खान बनाम खुर्शीद अहमद और अन्य* [(1974) 2 एससीसी 660] में, इस न्यायालय ने निम्नानुसार धारित किया:

> "39. प्रदर्श पी3 और अ.सा. 11/1 पर निर्वाचित उम्मीदवार के हस्ताक्षर की पहचान करने वाला मौखिक साक्ष्य भी है, विशेषकर हबीब, अ.सा. 23 के बयान में। उसने अपीलकर्ता की लिखावट के साथ अपनी परिचितता के बारे में नहीं कहा है। राय का साक्ष्य अनुश्रुत है और केवल तभी प्रासंगिक हो जाता है जब साक्ष्य अधिनियम की धारा 47 में निर्धारित शर्त पहले सिद्ध हो जाती है। इस विषय पर न्यायिक राय में कुछ मतभेद है, लेकिन हमें इसे यहां हल करने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि, यद्यपि स्वीकृत दस्तावेजों पर रहीम खान के हस्ताक्षर और प्रदर्श पी3 और अ.सा. 11/1 में काफी समानता है, हम संदिग्ध साक्ष्य या न्यायालयों द्वारा हस्ताक्षरों की सामान्य तुलना के आधार पर निष्कर्ष निकालने का जोखिम नहीं उठाना चाहते हैं। इन परिस्थितियों में, हमें निर्वाचित उम्मीदवार द्वारा या उसकी सहमति से मुद्रित पर्चों के वितरण के प्रमाण में, यदि कोई हो, अन्य साक्ष्य की खोज करनी होगी।"

मुरारी लाल बनाम मध्य प्रदेश राज्य [एआईआर 1980 एससी 531] में, इस न्यायालय ने निम्नानुसार धारित किया:-

> "11. हमारा दृढ़ मत है कि विधि का ऐसा कोई नियम नहीं है, न ही विवेक का कोई ऐसा नियम है जो विधि के नियम के रूप में स्पष्ट हो गया हो, कि एक हस्तलेख विशेषज्ञ के राय-साक्ष्य पर तब तक कभी भी कार्रवाई नहीं की जानी चाहिए, जब तक कि वह सारगर्भित रूप से संपुष्ट न हो। परंतु, लिखावट की पहचान के विज्ञान की अपूर्ण प्रकृति को ध्यान में रखते हुए, जैसा कि हमने पहले इंगित किया है, दृष्टिकोण सावधानीपूर्ण होना चाहिए। राय के कारणों की सावधानीपूर्वक जांच और परीक्षण किया जाना चाहिए। अन्य सभी प्रासंगिक साक्ष्यों पर विचार किया जाना चाहिए। उपयुक्त मामलों में, संपुष्टि मांगी जा सकती है। जिन मामलों में राय के कारण विश्वासप्रद हैं और संदेह उत्पन्न करने वाला कोई विश्वसनीय साक्ष्य नहीं है, वहां हस्तलेख विशेषज्ञ की असंपुष्ट गवाही को स्वीकार किया जा सकता है। ऐसे मामले में कोई अनम्य नियम नहीं हो सकता है जो, अंतिम विश्लेषण में, साक्ष्य संबंधी महत्व के प्रश्न से अधिक कुछ नहीं है। हमने इतना अधिक इसलिए कहा है क्योंकि यह एक ऐसा तर्क है जिसका अधीनस्थ न्यायालयों में बार-बार सामना करना पड़ता है और इस न्यायालय के निर्णयों से संदर्भ से हटाकर वाक्यों को अक्सर उछाला जाता है।"

15. अ.सा. 6 ने अपने मुख्य परीक्षण में कहा कि वह आरोपी व्यक्तियों, अर्थात् ए1 से ए3 को जानता था और ए2 नागरिक आपूर्ति निरीक्षक के कार्यालय में यूडीसी के पद पर कार्यरत था और उसने पहले उसके साथ वित्त विभाग में कार्य किया था। हालांकि, अ.सा. 6 ने अपने मुख्य परीक्षण में कहीं भी यह नहीं कहा है कि प्रक्षेप या जालसाजी का वर्तमान दृष्टांत ए2 के हाथों में था। प्रति-परीक्षण में, अ.सा. 6 ने कहा कि यद्यपि उसने वित्त विभाग

में ए 2 के साथ कार्य किया था, लेकिन वह विभाग के एक अलग अनुभाग में कार्यरत था। उसने स्पष्ट रूप से कहा है कि वह एफ 1 नामक बजट अनुभाग में कार्यरत था जबकि ए 2 एफ 2 अनुभाग नामक मोटर वाहन अनुभाग में कार्यरत था। हमारे ध्यान में यह भी लाया गया है कि प्रति-परीक्षण में, यह कहा गया था कि वित्त विभाग में ए 2 और एफ 2 अनुभाग द्वारा निपटाई गई फाइलें कभी भी एफ 1 अनुभाग में नहीं आती थीं जहां अ.सा. 6 कार्यरत था। इसलिए, हमारे सुविचारित मत में प्रक्षेप और साथ ही उस पर संलग्न आद्यक्षरों को ए 2 और ए 1 के हाथों में होना सिद्ध और स्थापित नहीं किया गया है।

16. इस मामले को देखते हुए, हमारा सुविचारित मत है कि अभियोजन यह सिद्ध और स्थापित करने में बुरी तरह विफल रहा है कि कथित प्रक्षेप और जालसाजी ए 1, ए 2 या ए 4 में से किसी के द्वारा की गई थी।

17. जैसा कि हमारे द्वारा पहले ही उल्लेख किया गया है, 2003 की आपराधिक अपील सं. 805-806 उपशमित हो जाती हैं। हम अन्य सभी अपीलों को स्वीकार करते हैं और प्रत्येक आरोपी व्यक्ति के विरुद्ध पारित दोषसिद्धि और दंडादेश के आदेशों को अपास्त करते हैं।

18. जमानत बंधपत्र विमोचित किए जाते हैं।

अपीलें स्वीकार की गईं।

आर.पी.

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।